# आमुख

साहित्य एवं विज्ञान का सन्तुलित विकास ही मनुष्य को आत्मिक तथा भौतिक सुख प्रदान कर सकता है। यह निर्विवाद सत्य है कि यह विज्ञान का युग है। भौतिक जगत की समस्याओं और कोलाहलों से अशान्त मनुष्य-मानस में सुख का लेपन करने के लिए साहित्य एवं कला का उचित विकास न हो तो मनुष्य अपनी वैज्ञानिक सिद्धियों का उपयोग विश्वविनाश के लिए करेगा। मानव-हृदय की कोमल भावतंत्रियों को झंकृत करने का काम केवल कला ही कर सकती है। इसलिए अन्य युगों की अपेक्षा इस वैज्ञानिक युग में साहित्य के समुचित विकास का प्राधान्य है।

उपर्युक्त भाव का समर्थन करते हुए हर साल की भाँति इस साल भी हम अपने कोलेज के कतिपय भावुक कलोपासकों की रचनाएँ प्रस्तुत करते हैं। ये रचनाएँ पाठकों की साहित्यिक अभिरुचि एवं ज्ञान-तृष्णा को तृप्त करने में ज़रा भी सफल हों तो हम अपने इस प्रयत्न को सफल समझेंगे।

# बीस साल बाद

P. K. R. KRISHNAN and P. M. DEEN

रात का समय। रमेश सिनेमा देखकर घर आ रहा था। चारों ओर घोर अंधकार था। रमेश सिनेमा के बारे में सोचते सोचते आसपास को भूल कर चल रहा था। एकाएक एक स्त्री की करुण पुकार ने उसके कानों को सचेत किया।

वह चारों ओर देखने लगा। लेकिन अंधकार में कुछ भी दिखाई नहीं दिया। फिर भी एक बार वह आवाज़ सुनाई पडी। पास के एक पेड के नीचे से वह आवाज़ आ रही थी। रमेश को थोडा सा भय हुआ। फिर भी धैर्य के साथ वह उस ओर चला।

वहाँ पेड के नीचे एक बुढिया पडी कराह रहा थी। रमेश को मालुम हो गया कि वह बुढिया जीवन की अंतिम घडियाँ गिन रही है। काँपती हुई वह कह रही थी — "मेरा बेटा, अब वह कहाँ होगा; क्या मैं एक बार, सिर्फ एक बार उसको देख सकूँगी, मरने के पहले एक बार, हाय!"

रमेश का मन पिघल गया। पास बैठकर उसने पूछा —

"माँ तुम कौन हो, क्यों इस तरह रोती हो?"

"मेरा बेटा कहाँ है? मैं उसको एक बार देखना चाहती हूँ" उसकी आवाज़ गले में ही रुक गयी।

रमेश को ऐसा लगा कि वह बुढिया अभी मर जाएगी।

रमेश ने पूछा — "तुम्हारा बेटा कौन है, कहाँ है"? "गाँव के गणपतराय के यहाँ," बुढिया ने जवाब दिया।

यह सुनकर रमेश स्तब्ध हो गया। क्योंकि गणपतराय उसके पिता हैं। घर में केवल माँ, बाप, वह और एक बुढा नौकर इतने ही लोग हैं।

बुढिया फिर कहने लगी बीस साल पहले मैं ने अपने कलेजे के टुकडे को वहाँ छोड दिया था। क्योंकि मैं उसको पाल नही सकती थी। फिर बुढिया ने एक विवाह-फोटो रमेश को देकर कहा — "तुम गणपतराय के यहाँ जाकर यह फोटो उसे दो, उसको सब मालुम हो जाएगा।

'यह बुढिया पागल तो नही है?' रमेश सोचने लगा। वह जानता था कि कुछ ही क्षणों में इसकी मृत्यु हो जाएगी। रमेश को यह विचार आया कि मैं खुद उसका बेटा कहकर उसे आश्वास के साथ मरने दूँ? न, न, किसी को मरते समय धोखा देना अच्छा नही। वह फिर सोचने लगा — "संसार में ऐसे कितने अनाथ भिख मांगे हैं, कितनी असहाय वृद्धायें हैं। इनकी मृत्यु से किसी की कोई हानि नही होती, किसी को ज़रा भी दुख नही होता। तब मैं बेकार क्यों चिंतित हूँ?" फिर भी न जाने क्यों उसका मन दुर्बल होने लगा। उसने अपने से पूछा —

"अरे मूर्ख, तुम क्या सोचते रहते हो?

एक बुढिया का अंतिम आग्रह तुम पूरा नही कर सकते ?''

रमेश ने तुरन्त बुढिया से कहा। '' माँ, तुम इधर ही रहो। मैं जाकर तुम्हारे पुत्रा को साथ लाऊँगा।'' शीघ्र ही वह घर की ओर दौडा।

रमेश ने घर में पहुँचकर वह विवाह-फोटो पिता के हाथ में दी। फोटो देखते ही गणपतराय के माथे पर शिकन पड गयी। अपने स्मृति-मण्डल में वह टटोलने लगा। बीस साल पहले के एक दिन की उसे याद आयी।

गणपतराय निसंतान था। एक दिन सबेरे उसने घर के बरमेद में एक बच्चे को सोते पाया। बच्चे के पास एक विवाह-फोटो भी थी। गणपतराय तुरन्त ही बच्चे को लेकर अन्दर गया। उस नि:संतान मनुष्य के हृदय में पिता का प्रेम उमड आया। उस दिन से उसने बच्चे को अपना पुत्र समझ कर पाला और बडा किया।

'' चिन्तामग्न पिता को देखकर रमेश बेचैन हुआ और बोला —

'' पिताजी आप चुप क्यों हैं, वह बुढिया कौन है ? कौन है उसका बेटा ?''

गणपतराय थोडी देर तक चुप रहे। फिर उन्होंने धीरे से कहा — '' शान्त हो बेटे, वह तुम्हारी ही माँ है ''

रमेश को ऐसा लगा कि वह किसी गहरे गर्त में गिर रहा है। उसको चक्कर आया। संभल कर उसने पिता से पूछा —

'' पिता जी, आप झूट बोलते हैं न ? क्या यह सच है, आपने सच ही कहा है ?''

'' रुद्धकण्ड से गणपतराय ने कहा — '' सच है ''

''सच, मेरी माता ! दौडते दौडते यह आवाज़ रमेश के मुँह से निकल गयी।''

चिल्लाते हुए वह पेड के पास पहुँच गया —

'' माँ, मेरी . . . माँ। मैं . . . तुम्हारा बेटा . . . आ गया। बुढिया का सिर गोद में लेकर वह कहने लगा — '' माँ आँखें खोलो, तुम्हारा बेटा आया है ''

लेकिन वे आँखें हमेशा के लिए बन्द हो चुकी थीं।

# बहन के घर में

AMBALANGADAN MOHAMED.

मध्याह्न का समय था। धूप की गर्मी के कारण बाहर निकलना कठिन था। पेट तो खाली था। पर घर के भीतर भूख मिटाने की कोई चीज नही थी। अबुकी पत्नी आयिषा ने थोडा ठंडा पानी पीकर प्यास बुझायी और सोनेवाली बच्ची को लेकर घर से निकली।

उसकी बहन सलीमा के घर जाना था उसका उद्देश। सलीमा का पति शहर का बडा व्यापारी था। तीन-चार वर्ष पहले तक उसे अब्दुरहिमान नाम से लोग जानते थे। लेकिन आज वह अमीर अब्दुल्ला है। अब्दुल्ला सेठ को शहर का हर आदमी जानता है।

आयिषा उसी कडी धूप में हाँफते हाँफते बहन के घर के द्वार पर आयी। तुरंत ही 'भौं' 'भौं' करता हुआ एक बडा अलसेशियन कुत्ता उसकी ओर दौड आया। आयिषा जोर से चिल्ला उठी। बच्ची भी जगकर रोने लगी। इतने में नौकर ने आकर कुत्ते से उनको बचाया।

सलीमा घर के भीतर कोई काम देख रही थी। नौकर से पता चला तो वह बाहर आयी और आयिषा से बातें करने लगी। सलीमा को यह नहीं मालुम था कि आयिषा उस समय वहाँ क्यों आयी है। उसने प्रश्न भरी दृष्टि से आयिषा को देखा। आयिषा जल्दी ही उन आँखों का अर्थ समझ गयी। लेकिन वह कैसे कह सकती कि भूख से तडप कर बच्ची को उठा के इस वक्त आयी है। आखिर उस के मुँह से ये शब्द निकले —

"बच्ची के पिता घर में नहीं हैं। कल रात को शराब पीकर आये और सबेरे ही कहीं चले गये। घर की हालत बिलकुल खराब है।"

सलीमा सब समझ गयी। आयिषा के पति के बारे में वह सब कुछ जानती थी। वह सबेरे से शाम तक काम करता था, परन्तु घर का ध्यान नहीं था उसको। हमेशा शराब पीकर दूसरों को सताना उसका काम था।

दोनों बहनें बातें कर रही थीं कि अब्दुल्ला साहब वहाँ आ गये। आयिषा को घर में देखकर अब्दुल्ला को अच्छा न लगा। घृणा एवं अवज्ञा के साथ उसने आयिषा से पूछा —

"तू क्यों आयी है इधर। तुम लोगों ने समझा है कि सबों की देख-रेख करना मेरा कर्तव्य है। यह आगे नही होगा। भूख लगी है तो कहीं जाकर भीख माँग। मेरे दरवाजे पर मत आया कर।"

आयिषा को ऐसा लगा कि पैरों से धरती फिसल जाती है और वह सिकुड कर तिनका हो रही है। आँसू को वह रोक नही सकी। एक मिनट भी वहाँ वह ठहर नहीं सकी। अपने घर की ओर तेजी से वह चलने लगी।

रास्ते में उसने देखा कि पुलिसवाले उसके पति को गिरफतार कर ले आ रहे हैं। आयिषा यह देखकर फूट फूट कर रोने लगी। किसी के मुँह से उसने सुना कि शराब के नशे में उसके पति ने किसी को मारा है।

आयिषा के पैर लडखडाने लगे। उसकी आँखों के सामने अंधकार छाने लगा। 'उसे संभालो संभालो' की आवाज़ आयिषा की क्षीण चेतना सुनती थी।

# बरट्रान्ड रस्सल

ABDURAHIMAN KUTTY, E. V P. — I B. Sc. (Mathematics)

इस शताब्दी के सर्वश्रेष्ठ दार्शनिक बरट्रान्ड रस्सल की मृत्यु हाल में हुई है। विश्व में शान्ति चाहने वाली जनताओं के लिए आप आशा की सुवर्ण रेखा थे। गणित-शास्त्र के महा पण्डितों के आप आचार्य थे। श्री रस्सल ने मानवोत्कर्ष के लिए अंध विश्वासों का सर्वनाश कर बुद्धि और युक्ति के विशाल राजपथ की सृष्टि की। पुराने अनेक दार्शनिक उनके उदात्त चिन्तन के सामने हतश्री हो गये। जीवन के प्रत्येक पहलू के संबन्ध में उन्होंने अपने सुचिंतित मत अभिव्यक्त किये हैं। देश एंव भूखण्डों की सीमाओं का उल्लंघन कर उनका व्यक्तित्व विश्व के क्षितिजों तक विकसित हो चुका है।

श्री बरट्रान्ड आरथर विल्यम रस्सल का जन्म इग्लैंड के प्रसिद्ध रस्सल परिवार में 18 मई सन् 1872 को हुआ। तीन साल की अवस्था में वे अनाथ हो गये। ईसाई धर्म के कठिन नियमों के निर्देशन में वे पले। आश्चर्य की बात है कि कालान्तर में ईसाई धर्म की नीव तक हिलाने में रस्सल सफल हुए।

सन् 1903 में रस्सल की प्रथम रचना 'गणित शास्त्र के तत्त्व' बाहर आयी। सन् 1910 में 'प्रिन्सिपिया माथमटिका' प्रकाशित हुई जिस में रस्सल और उनके गुरु वैटहेड की प्रतिभाओं का सम्मोहन सम्मिलन देख सकते हैं। इतने में ही विश्व के श्रेष्ठ चिन्तकों में रस्सल की गिनती होने लगी।

प्रथम आगोल युद्ध की भीषणताओं से दुखी रस्सल ने विश्व शन्ति के लिए आवाज़ उनयी। उनके क्रान्तिकारी विचारों से कुपित होकर अधिकारी वर्ग ने उन्हें अनेक बार सजायें दीं। किन्तु उनकी आत्मा स्वच्छन्द थी। उसके उन्मुक्त विहार को कोई भी न रोक सका।

किसी भी विषय पर निर्भय होकर अधिकार के साथ वे बोल सकते थे। नवीनता, वैविध्य एवं स्वच्छन्दता उनकी विशेषताएँ थीं। 'शिक्षा के संबन्ध में', 'स्वातंग्य के मार्ग', 'मन का विश्लेषण', 'शादी और सदाचार', रहस्यवाद और तर्कशास्त्र, 'पाश्चात्य दर्शन का इतिहास' आदि आप की प्रसिद्ध रचनाएँ हैं।

धर्मों पर अंधा होकर विश्वास करनेवाले एक आस्तिक नही थे श्री रस्सल। अपनी बुद्धि और तर्क के निकष पर जो बातें खरी निकलती थीं उनपर वे दृढ विश्वास करते थे और उनका प्रचार करते थे। जो उनकी दृष्टि में बुरे निकलते थे उनका दिल खोलकर वे विरोध करते थे। अपने अंतिम समय में भी श्री रस्सल वियट्नाम युद्ध और दक्षिण आफ्रिका के वर्ण विवेचन के विरोध में आवाज़ उठाते रहे।

इस असाधारण प्रतिभाशाली को अपने जीवन काल में ही समुचित आदर प्राप्त हुआ। 'अन्तर्देशीय अणुशक्ति कमीशन' के अध्यक्षपद को इन्होंने अलंकृत किया है। सन् 1949 में ब्रिटिश सरकार ने इन्हें 'ओडर ओफ मेरिट' की उपाधि देकर सम्मानित किया। सन् 1950 में आपको साहित्य का नोवलपुरस्कार भी प्राप्त हुआ।

श्री बरट्रान्ड रस्सल जैसे प्रतिभाशाली युगों में अवतरित होते हैं। युग-युगान्तरों तक आप के विचार विश्व की जनताओं के आदर्श बने रहेंगे। आप मरकर भी विश्व की स्मरणा में अमर रहेंगे।

# इनसान

HAKEEM III B. Sc. — Chemistry.

मैं शायद आप के लिए अजनबी हूँ। मगर नीलाकाश में अमृतवर्षा करनेवाला चाँद मुझे जानता है। तारे झिलमिलाते हुए मेरी ओर देख रहे हैं, मानों वे मुझे पहचानने की कोशिश कर रहे हों। और आप, आप मुझे नही जानते? तो सुनिए, मैं हूँ इनसान।

हाँ, मेरा नाम इनसान है। इसका अर्थ यह नहीं कि मुझ में इनसानियत है। मैं तो इनसानियत शब्द का अर्थ भी नहीं जानता। इस में मेरी गलती क्या है? गलती आपकी है जिन्होंने मुझे इनसान कहकर पुकारा।

इस दुनियाँ में मैं रोता हुआ आया। क्यों रोया, यह मैं नहीं जानता। शायद आप भी नहीं जानते। अब मेरा काम है आप को सताना। इसलिए कि मुझे जीना है, संसार में सुख भोगकर जीना है।

एक समय था जब मैं एक बच्चा था। सुना है कि बच्चे मन के सच्चे होते हैं। और मैं भी अच्छा था; सिर्फ बचपन में। तब मैं संसार के बारे में कुछ नहीं जानता था। खाने-पीने, खेलने-कूदने और सुन्दर सपने देखने में मैं ने सुख पाया। चन्द्रमा को देखकर मेरा मन हर्ष पुलकित हुआ। उषा और शाम मेरे हृदय की भावतंत्रियों को झंकृत करते थे। चिडियों का चहकना और झरनों का कल-कल नाद सुनकर मैं आत्म विभोर हो जाता था। सब लोग मुझे चाहते थे और मैं भी सब को चाहता था।

जब मैं बडा हुआ तो एक दूसरी ही दुनिया को मैं ने देखा। घृणा, ईर्ष्या, धोखा और आँसू से भरी एक विचित्र दुनिया। धन के पीछे सब लोग पगल थे। पैसे का मूल्य मुझे मालुम हो गया। सोचा, अपना मूल्य पैसे पर ही आधारित है।

मै ने आपसे घृणा करना सीखा। आपको शत्रु समझकर आपके सुन्दर सपनों से मैं ने खिलवाड किया। आप की अभिलाषाओं को असफल देखने में मुझे मजा आया। आपको दुख देने में मुझे सुख मिला।

भगवान ने मुझे इस दुनिया में भेजते हुए कहा — "तेरा कर्तव्य है दुनिया को प्यार की राह दिखाना। अगर उसमें तेरी विजय होगी तो तेरा जीवन सफल होगा।"

लेकिन भगवान का जीवन-संदेश मुझे पसंद नहीं आया। क्योंकि भगवान पर मेरा विश्वास ही नहीं था। तब उसके संदेश का मैं तिरस्कार क्यों न करूँ?

मैं जानता हूँ, इस संसार में आप चार दिन के मेहमान हैं। यहाँ से सबको एक दिन जाना ही पडेगा। फिर भी आप के खून का मैं प्यासा क्यों हो गया, यह समझ में नहीं आता। मजे की बात यह है कि आप के खून से मैं होली खेल रहा हूँ

और अपनी मृत्यु के बारे में एक मिनट भी नहीं सोचता हूँ।

आप तो प्यार की बातें कर रहे हैं। प्यार केवल एक कल्पना है। केवल किताबों का विषय है। इस संसार में प्यार के लिये जगह नहीं।

धन-दौलत के अंधकार में मैं अपने को खो गया। आप कहते हैं, पैसे के पीछे पागल हूँ, कहिए, मुझे पैसा चाहिए, प्यार नहीं। मैं जानता हूँ कि पैसे से श्रेष्ठ कोई वस्तु इस संसार में नहीं है।

घृणा मेरी प्रिया है। अन्याय एवं विरोध मेरे मित्र हैं। धोखा एवं हत्या मेरे काम हैं। दैव-पुत्र ईसा, मानव-प्रेमी गाँधी, देश-स्नेही लिंकन आदि का खून पीकर मैं ने अपनी प्यास बुझाने का प्रयत्न किया। लेकिन प्यास बुझी कहाँ?

क्या मैं कुछ पा सका? मुझे शाँति मिली? क्या मेरा जीवन सफल हुआ? इन सब के बारे में मैं ने अभी तक नहीं सोचा। सोचने की कोशिश भी नहीं की।

अब आप मेरी तरफ इस तरह घूर घूर कर क्यों देखते हैं। आपने मुझे पहचाना नहीं? अरे, मैं हूँ इनसान!

# नीरू

RUKHIA — I B. Com.

वह एक अच्छा दिन था। आजकल मुझे उतना उत्साह नहीं है जितना पहले होता था। कारण मैं नहीं जानता।

वर्षों पहले की बात है। एक दिन सबेरे मैं स्कूल जा रहा था। दस बज रहा था, इसलिए रास्ते से बहुत से लोग आते जाते थे। पीछे से एक करुण एवं दयनीय आवाज़ सुनाई पडी — "माँ एक पैसा, भैया एक पैसा, भूख लगती है"

मुडकर मैं ने देखा। ऐसा लगा मानों दरिद्रता की मूर्ति पीछे खडी हो। बारह-तेरह वर्ष की एक बालिका। अधनंगा शरीर; केवल चिथडे से नग्नता छिपायी गयी थी। भूख प्यास से उसके अधर सूख गये थे। गले से कंपित स्वर निकलता था। आँखें अश्रुसिक्त थीं। मैं ने उसे ध्यान से देखा। गरीबी की गोद में पलकर भी वह सुन्दर थी। यदि उसके माँ-बाप धनी और शिक्षित होते तो क्या उसकी यह हालत होती? उसकी निस्सहाय दशा पर मुझे दया आयी। लेकिन उसको देने के लिए मेरे पास एक पैसा भी नहीं था। कोई भी उसकी ओर दया के साथ देखता तक नहीं था। मैं चुपचाप स्कूल गया। मेरे मन में तरह तरह की चिन्ताएँ हुई। देश में रामराज्य लाने के यत्न में हैं सभी राजनीतिक पार्टियाँ। जनता की अज्ञता, और निस्सहायता का फायदा उठा कर स्वार्थ सिद्धि के लिए प्रयत्न करने वाले हैं इन पार्टियों के नेता। ये गरीबों का उद्धार नहीं कर सकते।

अगले दिन भी मैं ने उस बालिका को सडक के किनारे देखा। वह और भी दुर्बल एवं दीन दीखती थी। शायद पिछले दिन उसको एक बार भी खाना नहीं मिला था। मैं ने उसके पास जाकर उसके हाथों में पाँच पैसा दिया। उसका चेहरा आश्चर्य और आनन्द से दीप्त हुआ।

'तुम्हारा नाम क्या है' मैं ने पूछा?

'नीरू' करुणार्द्र स्वर में उसने जवाब दिया।

तेरे माँ बाप? मुझे उत्तर देने के बदले वह रोने लगी। फिर मैं ने कुछ नहीं पूछा। मुझे उस की हालत मालुम हुई।

फिर कुछ दिन के लिए मैं ने उसे रास्ते में नहीं देखा। दस-पन्द्रह दिन बाद एक दिन मैं स्कूल जा रहा था। मैं ने रास्ते में एक जगह बडी भीड देखी। भीड के बीच में एक मोटर गाडी खडी थी। मैं ने सोचा कि हमारे एम. एल. ए. आये होंगे। भीड को चीरकर मैं जलदी अंदर घुस गया। सामने देखा, मेरे भीतर से आह निकल गयी। मोटर गाडी के सामने रक्त से भीगा नीरू का शरीर। एक मिनट भी मैं वहाँ ठहर नहीं सका।

आज भी मैं कभी कभी सोचता हूँ कि नीरू ने भूख से तडपकर आत्महत्या की थी अथवा वह केवल दुर्घटना थी।

# पंत जी

SHAILAJA MANI M. — II B. A. English.

भारत में साहित्य के लिए दिया जानेवाला सर्वश्रेष्ठ पुरस्कार है एक लाख रुपये का ज्ञानपीठ-पुरस्कार। खुशी की बात है कि सन् 1969 का यह महान पुरस्कार हिन्दी के महाकवि श्री सुमित्रानंदन पंत को मिला है।

प्रसिद्ध अंग्रेजी कवि वेड्सवर्थ का यह कथन कि " Poetry is the image of man and nature "* सही हो तो पंत जी इस युग में भारत के सर्वश्रेष्ठ कवि हैं। आप की कविताएँ सुकुमार भावों और कोमल कल्पनाओं से उल्लसित हैं। आप एक नवीन शैली के उन्नायक माने जाते है।

पंत जी का जन्म सन् 1900 ई. मई 20 को अलमोडा जिले के कैसानी गाँव में हुआ। कैसानी के एक बडे जमीन्दार गंगादत्त पंत थे उनके पिताजी। उनके जन्म के घंटों बाद उनकी माता की मृत्यु हुई। बचपन से ही पंत जी घंटों प्रकृति की रमणीय गोद में विश्राम करते और प्रकृति की मोहक छवियों को देखकर आत्म-विभोर हो जाते थे। लेकिन मातृस्नेह से वंचित उस बालक के हृदय में कोई अव्यक्त वेदना जम गयी थी। आपका प्रथम कविता समाहार है ' वीणा ' जिसकी अधिकतर कविताएँ शोकात्मक हैं।

काशी और प्रयाग में रहकर आपने शिक्षा पायी। जब वे प्रयाग के कोलेज में पढ रहे थे तब उन्हें गाँधीजी से मिलने का अवसर मिला। फलस्वरूप उन्होंने कोलेज को छोडकर जन-सेवा को स्वीकार किया। फिर भी उन्होंने संस्कृत, बंगला और अंग्रेजी का अच्छा अध्ययन किया और संगीत की साधना की। शेली, कीट्स आदि अंग्रेजी कवियों तथा रविन्द्रनाथ ठाकुर से वे काफी प्रभावित हुए। उपनिषदों और वेदों के अध्ययन से आपकी कवि-भावना अधिक पुष्ट हुई।

पंत जी की रचनाओं को हम तीन वर्गों में विभक्त कर सकते हैं।

— प्रारंभ काल की रचनाएँ
विकास-काल की रचनाएँ
आध्यात्मिक रचनाएँ

प्रारंभ कालीन रचनाओं में प्रकृति सौंदर्य का मोहक अंकन हुआ है। आप प्रकृति और सौंदर्य के उपासक हैं, इसलिऐ आप सुकुमार भावनाओं के कवि कहे जाते हैं। ' वीणा ', ' पल्लव ' ' ग्रन्थि ' आदि काव्यों में प्रकृति-सुषमा का अपूर्व चित्रण हुआ है। ' गुंजन ' में प्रकृति-प्रेम के साथ उनकी भावना की एक नयी दिशा अस्पष्ट रूप में हम देख सकते हैं। ' युगान्त ', ' युगवाणी ', ' ग्राम्या ' आदि काव्यों में एक प्रगतिवादी पंत जी का परिचय हमें प्राप्त होता है। ये कृतियाँ उनके विकास काल की रचनाएँ मानी जाती हैं। किन्तु अब आप

---

* Preface to Lyrical Ballads : p. 23.

आध्यात्मिक भावों की ओर उन्मुख हो गये हैं। 'ग्राम्या' से लेकर 'स्वर्ण किरण' तक इस परिवेतन के आरंभ की सूचना मिलती है। श्री अरविन्द घोष की चिन्तनाओं से प्रभावित होकर पंत जी अपनी कविताओं को आध्यात्मिक रंग देने लगे। 'स्वर्ण-किरण', 'स्वर्ण-धूलि', 'कला और बूढा चाँद' से लेकर 'चिदंबरा' तक के सभी काव्यों में हम यह अध्यात्मिक स्वर ही सुनते हैं। उनकी 'चिदंबरा' के लिए ही उन्हें ज्ञान पीठ का पुरस्कार मिला है।

पंतजी की भाषा खडी बोली है जिसमें संस्कृत के शब्दों की प्रचुरता है। उन्होंने अपनी भाषा में कहीं कहीं व्रज, फारसी, उर्दू और अंग्रेजी के शब्दों का भी प्रयोग किया है। माधुर्य, कोमलता एवं सरलता उनकी शैली के प्रधान गुण हैं।

आजकल आप प्रयाग में रहते हैं। भारत सरकार ने 'पद्मभूषण' देकर उनका उचित आदर किया है।

# यक्षी

MOHAMMED KUTTY P. — I B. Sc. Chemistry

एक इतवार के दिन शाम को हम टहलने निकले। शायद चार या पाँच लोग थे। घूमते-घामते हम चालियारपुषा के किनारे पहुँचे। सब लोग पास के ऊँचे टीले पर आसीन हुए। ऊपर सायंकालीन शोणाभ आकाश था और नीचे हरा टीला जो घासों से सुशोभित था। नदी के उस पार घने वृक्ष थे जिनके बीच से अंधकार की छाया दिखाई दे रही थी। हममें से कोई मलयाटूर रामकृष्णन की कृति 'यक्षी' के बारे में कहने लगा। आखिर यक्षियों के बारे में ही चर्चा छिड गयी। किसी ने कहा कि उसके किसी मित्र ने यक्षी को देखा है। किसी ने कहा कि उसके गाँव के किसी आदमी को वर्षों पहले यक्षी ने मारा था। अंधेरा हो रहा था। यद्यपि मैं उनकी कहानियों पर विश्वास नही करता था, परन्तु फिर भी मेरे मन में थोडा सा भय हो रहा था। थोडी देर बाद हम सब प्रकृति की उस रमणीय गोद को छोडकर अपने अपने घर की ओर निकले। मित्रों से अलग होकर एकांत में राह चलते समय मेरा भय बढने लगा।

घर में पहुँचकर रात को अधिक देर तक में यक्षियों के बारे में सोचता रहा। बोध-मनस यक्षियों के अस्तित्व के विरुद्ध तर्क रचता रहा और साथ ही अबोध मनस यक्षियों से डरता रहा। मुझे नही मालुम कि कब निद्रादेवी के आलिंगन में मैं अपने को भूल गया।

एक प्रशान्त निशा। स्वच्छ चाँदनी चारों फैली हुई है। मैं एक नदी के किनारे बैठा हूँ। उस नीरवता में भी मुझे ऐसा लगा कि कहीं से कोई अव्यक्त आवाज़ आ रही है। आकाश में तारे झिल मिला रहे हैं। बीच में ऐसा लगा कि ऊपर से कोई तारा टूटकर नीचे गिर रहा हैं। अचानक वह प्रकाशपुंज एक स्त्री के रूप में बदल गया। उसका रंग सोने का था, उसकी सफेद साडी थी। खुला केश और चमकने वाली आँखें। मैं अवाक् रह गया। उसके लाल अधरों पर मुस्कराहट थी। वह सौंदर्य की मूर्ति उडकर मेरे सामने आयी। मुझे मालूम नही हुआ कि मैं क्या करुँ। मैं ने आँखें बंद कीं।

मुझे ऐसा अनुभव हुआ कि उस तरुणी ने मेरे शरीर का स्पर्श किया है, मीठी आवाज़ में वह कह रही है 'मैं तुम्हें प्यार करती हूँ'। आँखें खोलकर मैं ने उसे देखा। उसके चेहरे पर विश्व-मोहक हँसी थी और उसकी आखों में प्रेम की प्यास थी। मैं अपने को भूल गया। मैं उस पर अनुरक्त हुआ। मेरे हाथ में पकडकर वह चलने लगी। हम दोनों एक नाव पर चढे। नाव नदी में चलने लगी। वह सौंदरी की रानी मेरी आँखों में देखकर हँसने लगी। हँसी की आवाज़ धीरे-धीरे बढने लगी। आवाज़ इतनी बढी कि सारी दिशायें मुखरित हुई। मैं काँप उठा। संभल कर मैं ने

पूछा — "तुम कौन हो?" जवाब में वह ज़ोर से हँसने लगी। उसके दाँत चमकने लगे। आँखें चमकने लगीं। अधररक्त रंजित हुए। मुझे मालुम हुआ कि यह यक्षी है। मैं डर गया। किसी न किसी प्रकार बचना चाहा। लेकिन किनारा बहुत दूर है। मुझे ऐसा लगा कि वह स्त्री विकराल रुप धारण कर मेरी ओर आ रही हैं। मैं जोर से चिल्ला उठा — 'बचाओ, यक्षी मुझे मार रही है, बचाओ, बचाओ। सारी शक्ति लगा कर प्राण रक्षा के लिए मैं नाव से नदी में कूद पडा।

मेरी चिल्लाहट और कोलाहल सुनकर घरवाले सब जाग उठे। माँ जी ने मेरे पास आकर पूछा, 'क्या हुआ बेटा, बोल, क्या हुआ। तब भी मैं अर्धबोध की अवस्था में चिल्लाता रहा, 'यक्षी, यक्षी, यक्षी . . . . . ।

# युग-बोध

DR. K. R. SASIDHARAN PILLAI

युगीन अमस्याओं की गहराई तक पहुँचकर युग की रुग्णताओं एवं दुर्बलताओं को समझना और उनके निवारण के लिए प्रयत्न करना उदात्त प्रतिभा का कर्म है। इसको युग-धर्म कहते हैं। युग-धर्म का पालन करने के लिए युग का पूर्ण-बोध होना चाहिए, युग की सभी रीति-नीतियों एवं प्रवणताओं का परिचय होना चाहिए।

खेद की बात है कि इस युग की नयी पीढी को युग-बोध नहीं है और वह अलक्ष्य हो कर जान वरों का जीना जीती है। अनिश्चितता और लक्ष्य-हीनता विश्व में पहले भी हुई हैं; लेकिन अनेक मनिषियों ने युगानुकूल मनन कर विश्व को अंधकार से प्रकाश की ओर, असत् से सत् की और उन्मुख किया और युग-धर्म का पालन किया। विज्ञान के अत्याधुनिक आविष्कारों और मनुष्य के बौद्धिक विकासों को दृष्टि में रखते हुए भी मैं समझता हूँ कि यह युग अंधकारमय है। दिन व दिन विश्व के रंगमंच पर मानव-मूल्यों की हत्या होती रहती हैं। कोई भी किसी भी व्यवस्था या संस्था पर खुले दिल से विश्वास नहीं करता। मानव मन रुग्ण हो गये हैं। सोचने और समझने की शक्ति क्षीण हो गयी हैं। काम करने की स्फूर्ति बहुतों में है, किन्तु यह नहीं मालूम कि क्या करना है, और अनजाने में वे अपनी छाती में पीट रहे हैं। उनको यह भी नहीं मालूम कि उनकी छाती फट जाएगी और यह आत्महत्या का काम है। इसीलिए ऐसा करते हैं कि उनको अपनी प्रवृत्ति का कोई बोध नहीं है, कोई लक्ष्य नहीं है।

विश्व में जितने भी परिवर्तन हुए हैं सब के पीछे युग-बोधने ही काम किया है। साहित्य, दर्शन, राजनीति, बिज्ञान आदि सभी दिशाओं में युग की अवस्थाओं, आवश्यकताओं और आकांक्षाओं के प्रकाश में ही उन्नती हुई है। यदि किसी जनता को सामयिक परिस्थितियों की विशेषताओं का परिचय न हो युग की दुर्बलताओं, क्षमताओं और प्रश्नों का बोध न हो तो वह कोई भी सर्गात्मक कार्य नहीं कर सकेगी।

विश्व साहित्य के विकास क्रम को लेकर देखिए। जब क्लासिक साहित्य नियमों से जटिल, संकीर्ण और रसशून्य हो गया, जनसाधारण की भावनाओं एवं जीवन-चर्चाओं से दूर केवल राजा महाराजों और आदर्श पुरुषों का चित्रण करता रहा तो उस पद्धति के विद्रोह में स्वच्छन्दतावाद का आविर्भाव हुआ। जब स्वच्छन्दतावाद ने जन-जीवन की ऊष्मा एवं प्रकाश से दूर कल्पना-लोक में पलायन किया तो उसके विद्रोह स्वरूप यथार्थवाद का उदय हुआ। इस प्रकार युगानुकूल परिवर्तनों का इतिहास है विश्व साहित्य का क्रमिक विकास।

दर्शन को लीजिए। पुराने दर्शनों की युगोचित नयी व्याख्याएँ हुई हैं। उदाहरण के लिए शंकराचार्य के अद्वैतवाद और स्वामी विवेकानंद के

नव्यवेदान्तवाद को ले सकते हैं। शंकराचार्य के समय में भारतीय जनता भौतिक सुख-लोलुपात में अबद्ध होकर मानव-मूल्यों से वंचित थी। जनता में धार्मिक पतन हो गया था और उनकी चिन्ता-शक्ति क्षीण हो गयी थी। इस अवस्था से जनता का उद्धार करने का महान कार्य शंकराचार्य ने किया और उन्होंने अद्वैतवाद का प्रचार किया। उन्होंने कहा — "ब्रह्मसत्यं, जगनिथ्या"। अर्थात् ब्रह्म के अतिरिक्त और कहीं कुछ नहीं दिखाई देता और जो दिखाई देता है वह भ्रम है, माया है। अद्वैतवाद इस लौकिक मायाजाल से मुक्त होने का निर्देश देता है। अर्थात् अद्वैतवादी को इस दृश्य जगत् के प्रति कोई मोह नहीं हैं। अत: वह दर्शन निवृत्ति मार्ग की ओर उन्मुख है। जनता में भक्ति-भावना को विकसित कर धार्मिक पतन से उसे बचाना उस युग की आवश्यकता थी। इसिलिए शंकराचार्य ने निवृत्तिमूलक दर्शन का प्रचार किया। लेकिन स्वामी विवेकानंद ने इस अद्वैतवाद की अपने युग के अनुरुप नयी व्याख्या दी जिसे नव्यवेदान्तवाद कहते हैं। नव्यवेदान्तवाद में प्रवृत्तिमार्ग पर बल दिया गया है। स्वामी विवेकानंद के समय में विदेशी शासन से भारतियाँ की शक्ति, धैर्य एवं काम करने की स्पूर्ति नष्ट हो गयी थी। निराश, हताश एवं सुस्त भारतीय चेतना को उत्तेजित करना, उन्हें परिस्थितियों से अवगत कराना और कर्म मार्ग की ओर उन्मुख करांना युग की सब से बडी आवश्यकता थी। स्वामी विवेकानंद ने युग की माँग ठीक तरह से समझी और युगानुरुप नव्यवेदान्तवाद का प्रचार किया। नव्यवेदान्ती दृश्य जगत को मिथ्या नहीं मानते, अपितु उसमें विराट सत्ता का ही प्रसार देखते हैं और समस्त सृष्टि के मूल में उस परासत्ता का ही अस्तित्व मानते हैं। वे इस संसार से विमुख होने के पक्ष में नहीं है क्यों कि उनके विचार में इस जगह में भी ईश्वर-प्राप्ति हो सकती है। जीव-ब्रह्म और प्रकृति-ब्रह्म की एकता भी उन्हें मान्य है। उनके मत में इस दृश्य जगह में ईमानदारी के साथ काम करने से ही मोक्ष की प्राप्ति होगी। ऊर्थाट निवृत्तिमूलक अद्वैतवाद को स्वामी विवेकानंद ने युगानुकूल परिवर्तित कर प्रवृत्तिमूलक नव्यवेदान्तवाद बनाया। उनको अद्वैत-वाद की एक ऐसी व्याख्या देने की प्रेरणा युग-बोधने ही प्रदान की थी।

अत: हमारा निष्कर्ष यह है कि युग-बोध ही विश्व की उन्नति का आधार है। जो जनता समय की धडकन समझे और युग की पुकार सुने उसी की उन्नति होगी। जो जनता अपने बारे में नहीं सोचती, अपनी पार्श्वभूमि के बारे में नही जानती और अपने राष्ट्र की गतिविधियों के बारे में विचार नही करती उसको युग बोध कहाँ से मिलेगा? उसकी धारणाएँ, ज्ञान, शक्ति तथा सीमाएँ संकुचित होती जाएँगी और वह नीच कहलाएगी। भूत, वर्तमान और भविष्य का स्पष्ट बोध ही एक जनता को युगीन हीनताओं और न्यूनताओं का परिचय करा सकता है और उसे गलत रास्ते से ठीक रास्ता दिखा सकता है। अत: यदि किसी जनता का उद्धार होना हो तो उसे अतीत की स्मरणाओं पर पैर जमाकर वर्तमान का विश्लेषण करना है और भविष्य का मार्ग खोलना है। यही इस युग की भी आवश्यकता है और इसी की पूर्ति में विश्व का भला है।